© 2019 IJSRST | Volume 6 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section : Education

संस्कृत साहित्य और मिथक : अर्थ और स्वरूप

सोनिया

शोधछात्रा (संस्कृत), सनातन धर्म महाविद्यालय, मुज़फ्फरनगर

शोधालेखसार

प्राचीनतम धार्मिक मान्यताओं को व्यक्त करनेवाली अतिमानवीय कथाओं को 'पुराकथा या पुराकल्पन'(अर्थात् Myth) 'मिथक' कहते है। कर्मफल के सिद्धान्त को विशद करने के लिए भी कदाचित् 'मिथक' का निर्माण किया जाता है। ऐसे मिथक प्रथम दृष्टि में तो नितान्त अवैज्ञानिक (या अर्धवैज्ञानिक) जैसे ही प्रतीत होते हैं। परन्तु ऐसे मिथकों के पीछे कोई संस्कृतिविशेष के लोगों की एक तिर्यक् दार्शनिक दृष्टि भी कार्यरत होती है। कवि जब कोई काव्य का प्रणयन करते है तब वे प्रायः ऐतिहासिक ख्यात-इतिवृत्त का ही आश्रयण करते है, या कदाचित् अपूर्व-कल्पना मण्डित कथावस्तु लेकर सामने आते हैं। परन्तु जब ऐतिहासिक कथावस्तु का आश्रयण करके उसमें मूलतः उपनिबद्ध कोई मिथकीय तत्त्व का, अपनी निजी कविदृष्टि से, कोई अपूर्व अर्थघटन करके दिखलाते हैं तब वे मर्त्य कवि-व्यक्तित्व से उपर उठकर अमर महाकवि बन जाते है। ख्यात-इतिवृत्त का आश्रयण करनेवाले कवि से हम जो "कवि-न्याय" की उम्मीद रखते है उसमें भी मिथकीय अर्थघटन का समावेश किया जा सकता है।

मिथ और मिथक : शब्द और संकल्पना

मिथ शब्द से बना है मिथक। 'मिथ' शब्द संस्कृत और आंग्ल भाषा दोनों में पाया जाता है। संस्कृत में मिथ शब्द का आशय दो तत्वों के मिलन तथा प्रत्यक्ष ज्ञान से है। मिथक में ये दोनों ही अर्थ समाहित हैं। आंग्ल भाषा में मिथ का अर्थ है–कोरी कल्पना। अंग्रेजी के शब्द मिथ का हिन्दी रूप मिथक है और इस शब्द का प्रयोग आधुनिक काल में हुआ। यह शब्द हिन्दी जगत को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी से मिला। ध्यान देने योग्य बात यह है कि मिथ और मिथक अपनी अर्थगत संकल्पनाओं में समान नहीं हैं। मिथ प्राय: तर्क के विपरीत कोरा कल्पनाधर्मी अधिक माना जाता रहा है जबकि मिथक अलौकिकता का पुट रखते हुए भी लोकानुभूति का वाहक होता है। मिथ के कल्पनाधर्मी अर्थ को मानने वाले वेदों और पुराणों को इतिहास से परे कल्पना का चमत्कार मानते रहे हैं। इधर यह धारणा बदली है। इतिहास और मिथ या पुराणकथाओं के बीच की खाई संकल्पना के धरातल पर बहुत हद तक पट चुकी है।मिथ शब्द यूनानी मुथॉस से आया जिसका अर्थ है - मौखिक कथा। अरस्तू के यहां मिथ शब्द का प्रयोग कथाबन्ध या गल्पकथा के रूप में मिलता है।

हिंदी साहित्य में 'मिथक' के प्रयोग के परंपरा की शुरुआत आधुनिक काल से मानी जाती है। आधुनिक काल के प्रारंभ से ही रचनाकारों ने मिथक को महत्व देते हुए मिथक आधारित रचनाओं का नई दृष्टि से सृजन करना प्रारंभ कर दिया था। हिंदी साहित्य में मिथक शब्द का प्रयोग नितांत अर्वाचीन होते हुए भी एक दीर्घ पौराणिक विस्तृत परंपरा का परिचायक है। विद्वानों ने ऐसा माना है कि मिथक का जन्म प्रकृति में मानव के उद्भव के साथ ही हुआ है। मिथक उतना ही प्राचीन है जितनी स्वयं मानवजाति। मानव जाति के आरंभ काल में जब मानव में सृष्टि को देखने तथा समझने की दृष्टि उत्पन्न हुई, इन कथाओं ने जन्म लेना आरंभ कर दिया। प्रकृति के विभिन्न तत्वों जैसे सूर्य, चंद्र, नभ, धरा, पर्वत, सागर आदि, जीवन की विभिन्न घटनाएँ जैसे मृत्यु, जन्म, महामारी आदि, प्रकृति की विभिन्न घटनाएँ जैसे भूकंप, जलप्लावन आदि, मानस की अवधारणाओं तथा तत्संबंधी हर्ष, भय, विषाद, आश्चर्य आदि भावों को मिथक के द्वारा ही अभिव्यक्ति दी गई है।

पाश्चात्य विद्वानों के मत में मिथक से अभिप्राय

पाश्चात्य मिथकवादियों के मत से चक्रिक जीवन धारणा और उससे प्रेरित मिथक कल्पना कामदी और रैखिक जीवन कल्पना तथा उस पर आधारित मिथक विधान त्रासदी का आधार स्रोत हैं। प्रबंध काव्य संदर्भ में कामदी और त्रासदी एवं इसमें निहित सुखात्मक और दुखात्मक जीवन धारणाओं का प्रयोग किया जाता है। दांते और मिल्टन दोनों ने यद्यपि मसीही-मिथक साहित्य के आधार पर अपने अपने काव्य कथानकों की रचना की है। फिर भी चक्रिक जीवन धारणा के प्रभाव में एक कामदी (डिवाइन कॉमेडी : दिव्य कामदी) का और दूसरा त्रासदीय काव्य (पैराडाईज लॉस्ट : स्वर्ग से निष्क्रमण) का निरूपण करते हैं।

भारत के आस्तिक दर्शनों के अनुसार जीवन की गति अंततः न चक्रिक है और न रैखिक। भारत में भी नास्तिक दर्शनवादी जीवन की रैखिक गति में विश्वास करते हैं, जो ये मानते हैं कि जीवन का अंत मृत्यु के साथ ही हो जाता है।बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में प्रेसकाट ने अपनी पुस्तक 'पोएट्री एंड मिथ' में कविता और मिथक के व्यापक विमर्श प्रस्तुत किए। 'एनसाइक्लोपिडिया आव रिलिजन एंड एन्थ्रिक्स' में ई.ए. गार्डनर ने मिथक पर विचार करते हुए कहा कि मिथक प्रायः प्रत्यक्षतः या परोक्षतः कथा रूप में होता है। इस प्रकार मिथक कथा, नीति-कथा या अन्योक्ति से उसी प्रकार भिन्न है जिस प्रकार कहानी या रूपाख्यान से।4

'एनसाइक्लोपिडिया आव सोशल साइंसेज' में कहा गया गया है कि मिथक लोक साहित्य के सामान जातीय आकांक्षाओं, आदर्शों का एक सुस्पष्ट माध्यम है। प्रसिद्ध विद्वान मैक्समूलर ने मिथक को केवल भाषा का रोग, मैलेडी आव लैंग्वेज मात्र माना है। भाषा जब असमर्थता के कारण एक के स्थान पर, साम्य या भ्रांति के कारण, दूसरे शब्द को ग्रहण कर लेती है और अर्थ विषयक परिवर्तन भी पैदा कर देती है तब मिथक का जन्म होता है।

विद्वान् अर्न्स्ट कैसिरार मिथक का क्षेत्र इतना व्यापक मानते है कि मानव जीवन का कोई भी क्रिया-कलाप ऐसा नहीं है जो मिथकीय न हो।

श्री हेनरी जे. मरे के अनुसार मिथक किसी अनुमानित या विलक्षण घटना का बोधात्मक तथा नाटकीय प्रतिवस्तु-स्थापना है। वस्तुतः मिथक के स्वरूप को लेकर अनेक विचार और मत मिलते हैं। मिथक कोरी कल्पना न होकर कल्पना के खोल में अपने समय का एक सामाजिक यथार्थ होता है।

अमेरिकन कवि और दार्शनिक जॉर्ज सांतायनाने 'दि लाइफ ऑफ रियजन' में लिखते हैं–"जो अतीत का स्मरण नहीं करते, उन्हें अतीत में ही रहने का दंड मिलता है।" इसलिए मिथक कथाओं में जो आधुनिक चिंतन के स्वर पाए जाते हैं, उनका अध्ययन-मनन समय की आवश्यकता है।

जार्ज इलियट ने विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करते हुए इसे वस्तुगत सह संबंधी का विधान माना है और आधुनिक मिथकीय समीक्षक इसे मिथक रचना के नाम से अभिहित करते हैं। उपमामूलक अलंकारों में जहाँ प्रस्तुत और अप्रस्तुत के परस्पर आरोप के आधार पर चमत्कार की सृष्टि की जाती है, मिथक की कल्पना बीज रूप में निहित होती है। इनमें प्रमुख अलंकार होता है रूपक, विशेष कर सांगरूपक जो शब्द की लक्षणा शक्ति पर आश्रित है। प्रस्तुत पर अप्रस्तुत के आरोप जिसके लिए नार्थप फ्राई ने 'विस्थापन' का प्रयोग किया है जो मिथक रचना का मूल रहस्य है। मिथक काव्य में अनेक संदर्भों से निर्मित कथा का विस्थापन हो जाता है जबकि रूपक में सिर्फ एक संदर्भ का। इसलिए मिथक को रूपक का विस्तार माना जाता है।काव्य रचना के संदर्भ में मिथकों का प्रयोग काव्य के प्रबंध और प्रगीत-मुक्तक दोनों ही विधाओं में प्रमुखता से हुआ है। उपरोक्त विषय वस्तु को धयान में रखते हुए प्रबंध काव्य और प्रगीत मुक्तक काव्य में मिथकों के प्रयोग पर चर्चा करना आवश्यक है।

हिंदी साहित्य शास्त्र विदानों के मत में मिथक से तात्पर्य

डॉ.उषापुरी विद्या-वाचस्पति ने अपने 'भारतीय मिथक कोश' में मिथक शब्द की रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए सिद्ध किया है कि संस्कृत के मिथ शब्द के साथ कर्तावाचक 'क' प्रत्यय जुड़ने से इसका निर्माण हुआ है.संस्कृत के मिथ शब्द का प्रयोग प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए होता है जिसकी चर्चा हम पहले भी कर चुके हैं तथा दो तत्वों के परस्पर सम्मेलन के लिए भी .मिथक के सन्दर्भ में दोनों तत्व जुड़े प्रतीत होते हैं .इस प्रकार मिथक लौकिक तथा अलौकिक तत्वों का मिश्रण है२

डॉ.नगेन्द्र मिथक शब्द की उत्पत्ति संस्कृत से न मानकर,अंग्रेजी से स्वीकार करते हैं .उनका मानना है कि मिथक अंग्रेजी के मिथ शब्द का हिन्दी पर्याय है और अंग्रेजी का मिथ शब्द यूनानी भाषा के शब्द 'माइथामस' से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ है आप्तवचन या अतर्क्य कथन जिसका प्रयोग अरस्तु ने फ्रेबिल (कथा-विधान)के रूप में किया है ३ .हिन्दी में मिथ के लिए कल्पकथा ४, पुराकथा ५, धर्मगाथा ६, पुराख्यान तत्व ७ आदि शब्दों का प्रयोग भी

हुआ है .डॉ.रमेश कुंतल मेघ ने अपनी पुस्तक में मिथ शब्द का समानार्थी मिथक ही प्रयुक्त किया है ८ और आज मिथक शब्द ही एक प्रकार से रूढ़ हो गया है.

मिथक के लिए डॉ. नगेन्द्र तथा कवि बच्चन ने 'दन्तकथा',डॉ.रामअवध द्विवेदी ने 'पुरावृत्त' ,डॉ.सत्येन्द्र ने 'धर्मगाथा' ,कवि कुंवरनारायण ने 'पुराकथा' ,डॉ. लक्ष्मीनारायण शर्मा ने 'पुराख्यान' और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'मिथक' शब्द का प्रयोग किया जो आज हिंदी साहित्य में सर्वाधिक प्रचलित है. आचार्य द्विवेदी ने मिथक शब्द का प्रयोग अंग्रेजी के 'मिथ' के आधार पर किया है और 'क' प्रत्यय जोड़कर उसे हिंदी बना दिया है .हालाँकि अंग्रेजी के मिथ और संस्कृत के मिथ में पर्याप्त अंतर है .अंग्रेजी का मिथक कोरी कल्पना पर आधारित माना जाता है जबकि संस्कृत का मिथक अलौकिकता का पुट लिए लोकानुभूति बताने को दर्शाता है.

साहित्यकार हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आंग्ल भाषा के मिथ शब्द में क प्रत्यय जोड़कर मिथक शब्द का सृजन किया है। श्री द्विवेदी ने मिथक के संबंध में लिखा है–"मिथक शब्द वास्तव में भाषा का पूरक है। सारी भाषा इसके बल पर खड़ी है। आदि-मानव के चित्त में संचित अनेक अनुभूतियाँ मिथक के रूप में प्रकट होने के लिए व्याकुल रहती हैं। मिथक वस्तुतः उस सामूहिक मानव की भाव-निर्मात्री शक्ति की अभव्यक्ति है, जिसे कुछ मनोविज्ञानी 'आर्किटाइपल इमेज' कहकर संतोष कर लेते हैं।"

हजारी प्रसाद द्विवेदी 'साहित्य सहचर' में लिखते हैं - ''नए युग को अत्यंत संक्षेप में बताना हो तो कहेंगे कि यह युग मानवता का युग है।'' मिथक कथाओं में मानवता का संदेश कूट-कूटकर भरा गया है। इन प्रतीकात्मक कथाओं में मानव कल्याण के वे सब संदेश हैं, जिन्हें आज हम 'आधुनिक' के नाम से पुकारते हैं। वास्तव में अतीत वर्तमान की आधार भूमि है। अतीत हमें हमारी जड़ों तक ले जाता है। अतीत को विस्मृत कर हम वर्तमान में नहीं जी सकते।

काव्य और मिथक में सहसंबंध

काव्य से मिथक का घनिष्ठ संबंध रहा है जो भारतवर्ष में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी माना जाता है। मिथक शब्द अंग्रेजी के 'मिथ' का हिंदी रूप है तथा ऐसा माना जाता है कि यह शब्द हिंदी जगत को 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' से मिला। मिथ मूलतः ग्रीक भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है - 'वाणी का विषय'। वाणी का विषय से तात्पर्य है - एक कहानी, एक आख्यान जो प्राचीन काल में सत्य माने जाते थे और कुछ रहस्यमय अर्थ देते थे। मिथ शब्द के कुछ कोशगत अर्थ भी हैं - कोई पुरानी कहानी अथवा लोक विश्वास, किसी जाति का आख्यान, धार्मिक विश्वासों एवं प्रकृति के रहस्यों के विश्लेषण से युक्त देवताओं तथा वीर पुरुषों की पारंपरिक गाथा, कथन, वृत्त, किवदंती, परंपरागत कथा आदि। यदि इन सब अर्थों की मीमांसा की जाए तो एक बात सब अर्थों के मूल में किसी न किसी सीमा

तक लक्षित है - 'सबके मूल में कथा तत्व का होना'।1मिथक को दार्शनिक, तत्वशास्त्री, समाजशास्त्री, भाषाविज्ञानी, इतिहासकार और कोशकार सभी ने अपने अपने ढंग से परिभाषित किया। अरस्तू के यहाँ मिथ शब्द का का प्रयोग कथाबंध या गल्प कथा के रूप में मिलता है।2 रिचर्ड चेज का कहना है -'मिथक ही साहित्य है'। वे कहते हैं कि साहित्य का मुख्य रूप मिथकात्मक ही होता है।3

काव्य से मिथक का घनिष्ठ संबंध है ऐसी मान्यता सिर्फ भारतवर्ष में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी रही है। हिंदी साहित्य के विकासक्रम को देखने से ज्ञात होता है कि हिंदी साहित्य का कोई भी युग मिथकीय अवधारणा से अछूता नहीं है। कवि समाज का एक अंग होता है इसलिए मिथक उसके काव्य में अनायास ही प्रवेश कर जाते हैं। हिंदी काव्य में मिथकों से संबंधित जो काव्य रचना हुई वह परिणाम और महत्व दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। साहित्यिक घटनाओं और पात्रों को मिथकीय आयाम काव्य द्वारा ही प्राप्त होता है। भारत में वैदिक या उसके परवर्ती युग का और पश्चिम में यूनानी या हिब्रू भाषा के कवि सर्जना के क्षणों में जिस प्रक्रिया से मिथक की रचना करते थे मध्य युग तथा आधुनिक युग के कवि की सर्जनात्मक चेतना भी उसी का प्रयोग करती है। इस प्रकार केवल आदिम युग के कवियों ने ही नहीं बल्कि प्रत्येक युग के कवि ने अपने ढंग से मूलतः मिथक की रचना की है। अभिप्राय यह है कि होमर, इलियड, मिल्टन आदि ने अपने अपने देशकाल के रागात्मक उपकरणों और भाषिक साधनों के आधार पर एक प्रकार से मिथक की रचना की है। भारतीय संदर्भ में वैदिक कवि के सूक्तों में वाल्मीकि के रामायण, व्यास के महाभारत, तुलसीदास के रामचरितमानस, प्रसाद की कामायनी आदि में विभिन्न युगों के सामूहिक संस्कारों तथा भाषिक उपकरणों के अनुरूप मिथक सर्जना की एक परंपरा व्याप्त है। फलतः, मिथक और काव्य में अभेद संबंध है। मिथक और काव्य में संबंध स्थापित करते हुए फिलिप व्हीलराईट ने अपने विचार निम्न रूप में व्यक्त किए हैं -

काव्य और मिथक के संबंध में अनेक स्वरूपगत समानताएँ देखने को मिलती हैं -

(1) काव्य की विषयवस्तु तत्वतः प्राकृतिक होती है जबकि उसकी रूप-रचना मानवीय। इस प्रकार, काव्य प्रकृति का अनुकरण इस अर्थ में है कि वह प्रकृति का मानवीकरण कर उसे प्रस्तुत करता है। प्रकृति के मानवीय प्रस्तुतीकरण के लिए मिथक दो उपकरणों का प्रयोग करता है - उपमा और रूपक। उपमा प्राकृतिक और मानवीय रूपों में साम्य स्थापित करती है और रूपक मानवीय रूपों का प्रकृति के रूपों पर अभेद आरोप कर अपनी संकल्पनाएँ प्रस्तुत करता है ।

(2) काव्य के संरचनात्मक विधान का निर्माण मिथकीय तत्वों से होता है क्योंकि काव्य रचना की प्रक्रिया मूलतः मिथक के निर्माण की प्रक्रिया है। इलियट के मूर्त विधान और भारतीय काव्य-शास्त्र का विभावन व्यापार मिथक रचना के ही शास्त्रीय नाम हैं।

(3) जिस प्रकार मिथक का रूप ही उसका अर्थ है उसी प्रकार काव्य में भी उसके रूप के अतिरिक्त कोई अन्य अर्थ नहीं होता। दोनों में भाव, बिंब-प्रतीक और वस्तु का पूर्ण ऐकात्म्य या अभेद संबंध रहता है।

(4) काव्य की भाषा चित्र भाषा होती है। शास्त्र से भिन्न काव्य में कवि भाषा का सर्जनात्मक प्रयोग करता है। भाषा के सर्जनात्मक प्रयोग की यह प्रक्रिया मिथक रचना की प्रक्रिया है और चित्र भाषा मिथक भाषा का ही नया नाम है। 2

मिथक का स्वरूप निर्धारण

वस्तुत: मिथ के स्वरूप आदि को लेकर अनेक विचार और अनेक मत मिलते हैं। दार्शनिक, तत्वशास्त्री, समाजशास्त्री, मनोविश्लेषक, इतिहासकार, कलाकार आदि सबने मिथकों को अपने अपने कोण से देखा है। अत: किसी एक ही मत को मान लेना बहुत ठीक न होगा। फिर भी प्रतिनिधि मत के रूप में कहा जा सकता है कि मिथ या कहें मिथक कोरी कल्पना या गप्पबाजी न होकर, कल्पना के खोल में अपने समय का एक सामाजिक यथार्थ होता है। मिथकीय कल्पना के संबंध में कहा गया है कि मिथकों का कथ्य आज कल्पना का विषय बन चुका है। यह कल्पना सामान्य कवि कल्पना से भिन्न होती है। असल में सत्रहवीं-अठाहरवीं शताब्दियों में कपोल-कल्पना समझा जाने वाला मिथ मनोविज्ञान और विज्ञान के नवोन्मेष के साथ अपना अर्थ बदलने लगा।

कॉलरिज, एमर्सन, नीत्शे आदि ने इसे नए रूप में ही ग्रहण किया। इसे कविता की तर्ज पर एक खास प्रकार का सत्य ही माना गया। ऐतिहासिक सत्य का पूरक। इसलिए यदि कोई रचनाकार मिथक को लेकर अपने समय की रचना करना चाहता है तो उसे पहले मिथक के गहरे में निहित सामाजिक यथार्थ को पकड़ने का प्रयत्न करना चाहिए। अन्यथा या तोे रचनाकार मिथक के अभिधानात्मक रूप में ही उलझ कर रह जाएगा अर्थात थोड़े-बहुत संशोधन करता हुआ मात्र कथाधर्मी रह जाएगा अथवा उसके अपने सौन्दर्य को नष्ट-भ्रष्ट करके मानेगा। मिथक की उपयोगिता को लेकर अज्ञेय जिस खतरे की ओर संकेत करते हैं उससे मिथक के प्रयोग के प्रति नए कवियों की दृष्टि का पता चलता है - ' मिथक की उपयोगिता केवल इस बात में मानना कि वह पुरातन और अधुनातम में एक सतत समानान्तरता दिखाते चलने का साधन हैं, या कि समकालीन इतिहास की अराजकता-व्यर्थता को नियंत्रित - अनुशासित रूप में प्रस्तुत करने में सहायक होता है, मिथक को समझना हो न हो, अधुनातम इतिहास के साथ गलत नाता जोड़ना है।अगर समकालीन इतिहास अराजक है और हम मिथक के द्वारा उसमें सामंजस्य या व्यवस्था का आभास उत्पन्न कर भी लेते हैं तो अपने को धोखा देने के अलावा क्या करते हैं।'

अत: आगे का रचनाकार मिथक आधारित अपनी रचना में मिथक की केवल नई व्याख्या करने तक सीमित नहीं रहता और न ही उससे जुड़ी रूढ़ियों से उसे मुक्त कराने मात्र तक। बल्कि समर्थ रचनाकार मिथक में निहित देशकालातीत राग तत्व अर्थात सत्य तक पहुंचकर अपने समय के सत्य को अभिव्यक्त करता है। इस अर्थ में वह मिथक में निहित सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक तत्व का संधान कर, अपने समय के सत्य को वे ही विशेषताएं प्रदान करता हुआ उसमें आत्मसात करता है।क्यों कि हिन्दी में मिथक आधुनिक युग की देन हैं इसलिए यह रेखांकित करना उचित ही होगा कि हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के लगभग प्रारम्भ से ही मिथकों को महत्व देते हुए रचनाकारों ने मिथक आधारित रचनाओं का नयी दृष्टि से सृजन प्रारंभ कर दिया था। इस प्रसंग के विस्तार में न जाते हुए मैथिलीशरण गुप्त रचित साकेत, छायावादी कवि निराला रचित राम की शक्तिपूजा और प्रसाद की कामायनी का विशेष स्मरण कराया जा सकता है। नये कवियों के यहां भी न केवल मिथक आधारित अनेक

महत्वपूर्ण रचनाएं मिलती हैं बल्कि मिथक संबंधी उनके विचार भी ध्यान देने योग्य हैं। यहां उनका थोड़ा जायजा लेना मुनासिब होगा।

काव्य में मिथक के प्रयोग का इतिहास

मिथक रचना मानव मन की सहज प्रवृत्ति है। कवि की अनुभूति का निजी स्तर इतिहास के पटल पर विकसित होकर अपने अंतर्विरोधों के साथ जब राष्ट्रीय और सामाजिक आयामों में बँध जाता है तब काव्य में मिथकीय संचेतना का उद्भव होता है। मिथक स्वयं में काव्य तो नहीं परंतु काव्य का प्रमुख उपादान होता है। विद्वानों की ऐसी मान्यता रही है कि मिथकीय प्रयोग की यह प्रवृत्ति विश्व के समस्त देशों के काव्यों में प्राप्त होती है।

साहित्य में मिथक का का प्रयोग आरंभ से ही होता रहा है। भारतीय काव्य का आदि रूप वैदिक मिथकों में प्राप्त होता है। उधर यूरोपीय साहित्य का आदि रूप भी होमर पूर्वकाल के यूनानी मिथकों में मिलता है तथा पूर्वी एशिया के चीनी जापानी काव्य के विषय में भी यही सत्य है। भारतीय वैदिक काव्य का आधारभूत मिथक है देवासुर संग्राम। सृजन-विनाश, जन्म-मरण का द्वंद्व जीवन का आदि प्रश्न है जिसे मानव ने अनेक प्रकार से हल करने का प्रयास किया है। जीवन में व्याप्त उद्भव, विकास, विनाश, पुनर्सृष्टि की प्रक्रिया से संकेत प्राप्त कर उसने जन्म-मरण-पुनर्जन्म की मिथक श्रृंखला की कल्पना की। पुनर्जन्म की कल्पना से उसे मृत्यु की विभीषिका से त्राण मिला किंतु पुनर्जन्म की नियति भी तो मृत्यु है। अतः जन्म-मरण की श्रृंखला के आवागमन का यह चक्र उसके लिए सबसे बड़ी समस्या बन गया। किंतु उस मानव के भीतर विद्यमान चैतन्य तत्व ने एक ऐसी विराट सत्ता की कल्पना की जिसका न आदि है न अंत, जो देशकाल की सीमाओं से परे है और सभी में व्याप्त है। पाश्चात्य मिथक कल्पना की प्रक्रिया भी लगभग उपरोक्त मत के समान है। यूरोप के मिथक वैज्ञानिकों के अनुसार मिथक के मूलतः दो वर्ग हैं। प्रथम वर्ग के अंतर्गत वे मिथक आते हैं जो जीवन की चक्राकार गति को लेकर चलते हैं तथा द्वितीय वर्ग में ऐसे मिथक जिनके मूल में जीवन की रेखाकार गति की अवधारणा निहित है। पहले वर्ग के मिथकों के प्रेरणास्रोत हैं प्राचीन देववाद। यह दर्शन प्रकृति के जीवन से प्रभावित है जिसमें उद्भव, विकास, विनाश और पुनर्सृष्टि की निरंतर श्रृंखला लगी हुई है। ऋतुओं का प्रतिवर्तन, सौर मंडल के सूर्य, तारा-चंद्र का उदय अस्त होना आदि चक्र गति से ही होता है। इस घटना क्रम से प्रेरित होकर यूरोप के दार्शनिकों ने जीवन के चक्राकार गति की परिकल्पना की। रैखिक मिथकों का मूल आधार है मसीही दर्शन जिसमें जीवन की गति रेखाकार चलती है। इसके तीन समदिक् विकास बिंदु हैं - ईसा का जन्म, बलिदान और पुनर्जीवन जो एक ही बार घटित होते हैं।

संस्कृत साहित्य में मिथक प्रयोग

भारतीय वैदिक वाङमय से लेकर संस्कृत और हिंदी वाङमय के अद्यतन काव्य में मिथक का सजीव चित्रण सा हुआ है। मिथक जब कविधर्म बन जाता है तो काव्य धर्म एवं कवि समय जैसी मान्यताएँ जन्म लेने लगती हैं जैसे क्रौंच-वध और कविता का जन्म, नीर-क्षीर विवेक और साहित्यिक आदर्श आदि जैसे अगणित मिथक उसे समृद्ध

बनाते है। वस्तुतः, मिथक आदिम काव्य है क्योंकि आदिम मानव की कल्पनात्मक वृत्ति ने इन कथाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति पाई है। विश्व के अन्य देशों की तरह भारत में भी विशाल मिथक संपदा ऋग्वेद से लेकर संस्कृत के अभिजात काव्य, महाकाव्य, आख्यायिका और पाली, प्राकृत और अपभ्रंश के साहित्य में भरी पड़ी है।रामायण, महाभारत की मूल कथाओं का निर्माण भी वैदिक मिथकों से ही हुआ है। रामायण में एक ओर राम-रावण युद्ध में देवासुर संग्राम का मिथक है जो प्रकृति की उत्पादन शक्ति का मिथक सीता के जन्म के रूप में व्यक्त हुआ है। सीता की अग्नि-परीक्षा जैसे कई अन्य मिथकों की चर्चा रामायण में की गई है। वहीं महाभारत की कथा में इंद्र, वरुण, सूर्य, अग्नि, यम, मरुत आदि वैदिक देवता सक्रियता से प्रकट हुए हैं और वैदिक वाङमय के उर्वशी-पुरुरवा, शकुंतला-दुष्यंत आदि के मिथकीय आख्यानों का रोचकता से वर्णन किया गया है। प्रलय और मनु की नाव का मिथक जिसका संकेत ऋग्वेद में मिलता है, महाभारत में एक मिथकीय आख्यान बन जाता है। महाभारत मुख्य रूप से भरत वंश के योद्धाओं की कथा है। देवासुर संग्राम का मिथक यहाँ बीज रूप में मिलता है क्योंकि सभी पांडव देवपुत्र और देवभावनाओं से संपन्न हैं तथा कौरव आसुरी प्रवृत्तियों से। इसके साथ ही महाभारत की कथा में सृष्टि की कथा, सूर्यवंश और चंद्रवंश की उत्पत्ति तथा विभिन्न यज्ञादि का वर्णन बहुलता से मिलता है। परवर्ती प्रबंध काव्यों का आधारस्रोत रामायण और महाभारत की कथा को बनाकर भी अनेक काव्य रचे गए। कुमारसंभव, रघुवंश, नैषध चरित, शिशुपाल वध, किरातार्जुनीय की कथा भी महाभारत पर आधारित है।

प्रबंध काव्यों की कथा का नायक दैवीय शक्तियों से संपन्न राजा होता है। वह अपने विरोधी प्रतिनायक के विरुद्ध संघर्ष करता है और अनेक प्रकार के दुख भोगता है। दुर्घटनाओं के चक्र में फँस कर नायक की मृत्यु हो जाती है या वह मृत्यु के निकट पहुँच जाता है किंतु देव कृपा से वह पुनर्जीवन प्राप्त करता है या मृत्यु की स्थिति से उबरकर दिव्य शक्ति का वरण करता है। भारतीय प्रबंध काव्यों में काफी हद तक यह सूत्र देखने को मिलता है।प्राचीन पुराकथाओं का तत्त्व जो नवीन स्थितियों में नये अर्थ का वहन करे मिथक कहलाता है। मिथकों का जन्म ही इसलिए हुआ था कि वे प्रागैतिहासिक मनुष्य के उस आघात और आतंक को कम कर सकें, जो उसे प्रकृति से सहसा अलग होने पर महसूस हुआ था-और मिथक यह काम केवल एक तरह से ही कर सकते थे-स्वयं प्रकृति और देवताओं का मानवीकरण करके।इस अर्थ में मिथक एक ही समय में मनुष्य के अलगाव को प्रतिबिम्बित करते हैं और उस अलगाव से जो पीड़ा उत्पन्न होती है, उससे मुक्ति भी दिलाते हैं। प्रकृति से अभिन्न होने का नॉस्टाल्जिया, प्राथमिक स्मृति की कौंध, शाश्वत और चिरन्तन से पुनः जुड़ने का स्वप्न ये भावनाएँ मिथक को सम्भव बनाने में सबसे सशक्त भूमिका अदा करती हैं। सच पूछें, तो मिथक और कुछ नहीं प्रागैतिहासिक मनुष्य का एक सामूहिक स्वप्न है जो व्यक्ति के स्वप्न की तरह काफी अस्पष्ट, संगतिहीन और संश्लिष्ट भी है। कालान्तर में पुरातन अतीत की ये अस्पष्ट गूँजें, ये धुँधली आकांक्षाएँ एक तर्कसंगत प्रतीकात्मक ढाँचे में ढल जाती हैं और प्राथमिक यथार्थ की पहली, क्षणभंगुर, फिसलती यादें महाकाव्यों की सुनिश्चित संरचना में गठित होती हैं। मिथक और इतिहास के बीच महाकाव्य एक सेतु है, जो पुरातन स्वप्नों को काव्यात्मक ढाँचे में अवतरित करता है।

ऐसा भी माना गया है कि जितने मिथक हैं, सब परिकल्पना पर आधारित हैं। फिर भी यह मूल्य आधारित परिकल्पना थी जिसका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था को मजबूत करना था। प्राचीन मिथकों की खासियत यही थी कि वह मूल्यहीन और आदर्शविहीन नहीं थे। मिथकों का जन्म समाज व्यवस्था को कायम रखने के लिए हुआ। मिथक लोक विश्वास से जन्मते हैं। पुरातनकाल में स्थापित किये गये धार्मिक मिथकों का मंतव्य स्वर्ग तथा नरक का लोभ, भय दिखाकर लोगों को विसंगतियों से दूर रखना था। मिथ और मिथक भिन्न है। मिथक असत्य नहीं है।[2]इस शब्द का प्रयोग साहित्य से इतर झूठ या काल्पनिक कथाओं के लिए भी किया जाता है।
"भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः"

बौद्ध शून्यवाद भी उच्चतर भूमिका पर इसी धारणा का पोषण करता है। किंतु ये नास्तिक दर्शन अत्यंत अल्पसंख्यक होने के कारण भारतीय विचार धारा का प्रतिनिधित्व नहीं करते। इसलिए भारतीय साहित्य में पाश्चात्य शैली के करुण काव्य तथा त्रासदी काव्य का प्रायः अभाव है। रामायण और महाभारत का समापन नायक की मृत्यु के साथ अवश्य होता है, परंतु वहाँ मृत्यु नायक के जीवन का अंत न होकर स्वर्गारोहण का सोपान है, जहाँ वह अनंत आनंदमय जीवन का उपभोग करता है। देवासुर संग्राम के मूल प्रयोजन से प्रेरित भारतीय मिथक में असुर वर्ग की असीम शक्ति और अपार वैभव का वर्णन है किंतु विजय देवों की ही होती है। 3 भारतीय काव्य-शास्त्र में मिथक अथवा काव्य के मिथकीय आधार का प्रत्यक्ष विवेचन नहीं मिलता। यहाँ मिथक का समानांतर शब्द है पुराण या पुराख्यान और अनेक पुराणों के आरंभ में उसकी परिभाषा दी गई है। राजशेखर आदि एक-दो आचार्यों ने जिन्होंने अपने विषय का प्रतिपादन शब्दार्थ के व्यापक रूप - वाङमय से आरंभ किया है। वाङमय के एक भेद के रूप में पुराण के स्वरूप का संक्षेप में निर्देश किया गया है -
"इह वाङमयमुभयथा - शास्त्रं काव्यं च

तच्च (शास्त्रञ्च) द्विधा - अपौरुषेयम पौरुषेयम च
पौरुषेयम तू पुराणं। तत्र वेदाख्यामोपनिबंधनप्रायं पुराणामष्टादशधा।"
अर्थात्, वाङमय के दो भेद हैं - शास्त्र और काव्य। शास्त्र दो प्रकार का होता है पौरुषेय और अपौरुषेय। पुराण नामक विधा पौरुषेय विधा के अंतर्गत आती है।

इस आधार पर राजशेखर ने काव्यशास्त्र की सामान्य परंपरा से थोड़ा हटकर पुराण स्वरूप का निरूपण किया किंतु उसे शास्त्र का उपभेद माना गया काव्य का नहीं।भारतीय काव्यशास्त्र का आदिग्रंथ भरतमुनि का नाट्यशास्त्र है। भले ही भारतीय कलाओं का ज्ञानकोष होने पर भी मिथक का विवेचन नाट्यशास्त्र में नहीं मिलता परंतु नाटक की उत्पत्ति का वर्णन भरत ने मिथकीय शैली में ही किया है।रस

निष्पति के संदर्भ में भरत सूत्र के व्याख्याता शंकुक ने काव्य कला के स्वरूप की व्याख्या 'चित्र-तुरंग-न्याय' के द्वारा की है। उनका अभिप्राय है कि चित्र में अंकित अश्व की प्रतीति न सत्य होती है न असत्य।आचार्य अभिनवगुप्त ने नाट्य अनुभूति का विश्लेषण करते हुए कहा है कि दर्शक प्रेक्षागृह में प्रस्तुत - दृश्य को न एकांत सत्य मानता है और न सर्वथा असत्य। वह एक प्रकार से उसमें सत्यासत्य की युगपत अनुभूति करता है।

आनंदवर्धन ने ध्वनि-सिद्धांत की प्रस्तावना में लिखा है कि काव्यार्थ प्रतीयमान होता है। अर्थात, उसकी प्रतीति साक्षात न होकर कल्पनागम्य होती है। जिसका अभिप्राय है कि लौकिकदृष्टि से काव्य प्रसंग प्रत्यक्ष नहीं होता, प्रत्यक्षामाण होता है जिससे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष की प्रतीति होती है किंतु साथ ही वह परोक्ष भी नहीं होता। कवि के मन के अंतर्गत विद्यमान भाव को अभिव्यक्त करने के कारण विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी के इस समस्त प्रपंच को भाव कहते हैं और यही विभावन व्यापार है। भट्टनायक ने भावकत्व व्यापार के रूप में विभावन व्यापार का निर्वचन किया है जिसके द्वारा कवि काव्य में वर्ण्य विशेष को साधारण अथवा सर्वग्राहय रूप में उपस्थापित करता है। भावकत्व वास्तव में वह व्यापार है जिसके द्वारा कवि मूल भाव के आधार पर गुण, अलंकार से युक्त काव्य की रूप रचना या काव्य मिथक की रचना करता है। अमूर्त भाव-विचारगम्य विषय को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने के कारण, पश्चिम के आचार्यों ने इसे मूर्त विधान कहा है।

उत्तररामचरित ' में मिथक

भवभूति की कविदृष्टि में मिथक की दो घटनायें प्रमुख है -1. लोकापवाद से राम के द्वारा सीता का त्याग, एवं 2. अकालमृत्यु को प्राप्त हुए किसी ब्राह्मण के बालकपुत्र को पुनरुज्जीवित करने के लिए रामने किया हुआ शूद्र तापस – 'शम्बूक' - का वध ।इसमें से सीता-परित्याग घटनाचक्र तो ऐतिहासिक कहा जा सकता है, परंतु शूद्रतापस के वध द्वारा मृतपुत्र को पुनरुज्जीवित करने की जो घटना है, वह एक प्रकार का मिथक ही है । क्योंकि संसार मैं ऐसा देखा नहीं जाता कि किसी शूद्र के तप करने से कोई ब्राह्मणपुत्र की अकाल मृत्यु हो जाय, और शूद्र-तापस का वध करने से वह बालक पुनरुज्जीवित हो जाय – यह दोनों बातें आज के वैज्ञानिक युग में ग्राह्य नहीं हो सकती। भवभूति ने सीतात्याग की ऐतिहासिक घटना को प्रथम अङ्क में रखा और शम्बूकबध की मिथकीय घटना दूसरे अङ्क में। तत्पश्चाद् अनुगामी अङ्कों में इन दोनों घटनाओं के परिणाम क्रमशः दिखलाये हैं । यथा सीतात्याग की घटना का परिणाम तृतीय अङ्क में साकार होता है । यहाँ पर सीता के निरवधि विरह एवं तज्जन्य-शोक से करुणरसमण्डित नाट्यसृष्टि प्रस्तुत की जाती है । दूसरे अंक में घटी शम्बूकवध की घटना के परिणाम स्वरूप " मृतपुत्रों के सजीवन होने " का घटनाचक्र के अंकों में आकारित किया गया है ।इस प्रकार हम देखते है कि यही मिथकीय सत्य राम के व्यक्तिगत जीवन में भी कैसे शनैः शनैः मूर्तिमन्त होता है जिसको विविध रूपों में कवि हमारे लिए आगे दिखलाया जाता है । शम्बूकवध के बाद उसी दिन राम

अपनी वापसी यात्रा में ही माता सहित के दो पुत्रों को लेकर ही अयोध्या वापस लौटते हैं – यह नाट्यगत सत्य है । सीतात्याग के साथ ही जो गर्भस्थ संतानो का प्रसव भी संशयग्रस्त हो गया था, वह दोनों (कुश एवं लव) नाटक के उत्तरार्द्ध में फिर से अपने मातापिता को मिलते हैं । इस तरह भवभूतिने 'उत्तररामचरित' नामक नाटक की जो रचना की है, वह करुणरसप्रधान होते हुए भी करुणान्त नहीं है । बल्कि स्वाभाविकरूप से ही शम्बूकवध रूपी कर्मका परिपाक दिखलानेवाली और सुखान्त में परिणत होनेवाली एक अनुपम नाट्यसृष्टि हमारे सामने रखी गई है ।।

भवभूति को शम्बूकवध की कथा एक मिथक के रूप में, वाल्मीकीय रामायण से प्राप्त हुई थी । परन्तु उसे सही अर्थ में राम के ही वर्तमान जीवन में साकार होती हुई दिखलाने का सफल कविकर्म केवल भवभूतिने ही किया है । इस तरह से उन्होंने अपना महाकवित्व सिद्ध किया है ।।

'उत्तररामचरित' का सुखान्त कोई नाट्यशास्त्रीय आज्ञा का कृत्रिम परिणाम नहीं है । परन्तु एक मिथकीय सत्य ही राम के जीवन में साकार होता है, इसीलिए वह सुखान्त बना है ऐसा दिखलाकर भवभूति ने राम के दुष्कर राजकर्म का सुफल इसी जन्म में परिणत होता हुआ सिद्ध किया है । "उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते" यह उक्ति का मर्म भी उसके सुखान्त होने में ढूँढना चाहिये

साहित्य और मिथक

साहित्य सृजन के क्षेत्र में 'मिथक' एक ऐसा तत्व है जो भाषा को व्यापक आयाम देकर रहस्यात्मकता,लाक्षणिकता और विलक्षणता प्रदान करने में समर्थ है .मिथक के विस्तृत परिदृश्य में केवल पुराणकथा का नहीं बल्कि लोककथा,निजंधरी कथा तथा आख्यानात्मक कथाओं का भी समावेश होता है. प्राचीन साहित्य में उपलब्ध देवता, राक्षस,गन्धर्व,किन्नर,यक्ष आदि के सन्दर्भ, मिथक के अंग हैं.मिथक तत्व भाषा कि भांति ही मनुष्य कि निश्चित सर्जना शक्ति का विलास है.यह ऊपर से देखने में असत्य या अन्धविश्वास भले ही प्रतीत हो, गंभीरता पूर्वक विचार करने पर प उनमें किसी प्रच्छन्न या परोक्ष सत्य को पा लेना कठिन नहीं है.मिथक की उत्पत्ति के कारणों एक कारण तो स्पष्ट है –जब आदिमानव ने अपने अंतर की अभिव्यक्ति के लिए किसी साधन को चुना होगा तो मिथक ही उसमें सबसे अधिक संप्रेषणीय तत्व रहा होगा.जैसे-जैसे भाषा में अभिव्यक्ति की क्षमता बढ़ती गयी और प्रतीक-विधान तथा बिम्ब योजना पुष्ट होती गयी मिथकों के प्रयोग का स्वरूप बदलता गया.मनोरंजन और कथात्मक आनंद के साथ मिथक अपने प्रारंभिक रूप से भिन्न हो गए.पौराणिक कथाएं,निजंधरी कथाएं तथा क्षेपक एवं दंतकथाएं इस बात के प्रमाण हैं कि मिथक तत्व अपनी समस्त ऊर्जा के साथ किसी न किसी रूप में भाषा और साहित्य में जीवित हैं. मिथक तत्व वास्तव में भाषा का पूरक है. सारी भाषा इसके बल पर खड़ी है.आदिमानव के चित्त में संचित अनेक अनुभूतियाँ मिथक के रूप में प्रकट होने के लिए व्याकुल रहती हैं .मिथक वस्तुतः उस सामूहिक मानव कि

भावनिर्मात्री शक्ति की अभिव्यक्ति है जिसे कुछ मनोविज्ञानी आर्किताईपल इमेज (आद्यबिम्ब)कहकर संतोष कर लेते हैं ."१

उपसंहार

मिथक को भारतीय संदर्भ में आदिम युग के वास्तविक विश्वासों की अभिव्यक्ति माना गया है जो आख्यानपरक भी है और प्रतीकवत भी। यह जानना दिलचस्प होगा कि राम कथा की एक व्याख्या सीता को जीव, हनुमान को गुरू, लंका को शरीर, समुद्र को संसार, राम को ब्रहम और रावण को देह स्थित विकराल विकार मानते हुए भी की जाती है। इसी प्रकार कृष्ण की रासलीला की भी योगपरक और आध्यात्मिक व्याख्याएं हुई हैं जिनकी तहत गोपियां अनेक नाड़ियां, राधा कुंडलिनी, वृंदावन मस्तिष्क का सहस्रदल कमल है। खैर, यहां एक बात उल्लेखनीय है कि मिथक की उपादेयता को प्राय: सबने स्वीकार कर लिया है। इसका एक कारण यह है कि मिथकों में प्र्राय: मूलभूत समस्याओं को उठाते हुए उनके समाधान तक पहंुचा गया है। किसी भी संस्कृति की पहचान के लिए इनकी उपादेयता असंदिग्ध है। साथ ही भाषा की पुन:सर्जना के भी ये उपादान सिद्ध हुए हैं।

मिथक का रूप आख्यानपरक होने के कारण प्रबंध काव्य से मिथक का संबंध प्रारंभ से ही घनिष्ठ रहा है। पाश्चात्य एवं भारतीय सभी प्रमुख प्रबंध काव्यों की कथावस्तु प्रत्यक्षतः या परोक्षतः मिथकों पर आधारित है। होमर के दो महाकाव्य 'इलियड' और 'ओडेसी' की रचना भी मिथकों के आधार पर हुई है जो जनश्रुति के रूप में प्रचलित थे। इन काव्यों में आदिम मानव जाति के राग-द्वेष, कामुकता, वासना, भय, घृणा, अहंकार आदि वृत्तियों का चित्रण हुआ है। वहीं भारतीय इंद्र-वृत्र युद्ध का कथानक देवासुर संग्राम के रूप में चित्रित है जो कालांतर में कई परवर्ती काव्यों के कथानकों की सृष्टि करता है। इसके अलावा देवताओं की अनेक प्रणय कथाएँ, सृष्टि के विकास, मनुष्य के जन्म-मरण, प्रकृति की घटनाओं की व्याख्या करने वाली गाथाओं का संकलन उपनिषद्, पुराणों में मिलता है जो कालांतर में काव्य के रूप में रचित हुईं।

"मनुष्य की आदिभाषा काव्यमय रही और इसका कारण यह है कि वह एक ऐसी चेतना की सहज अभिव्यक्ति है जिसे हम आधुनिक शब्दावली में मुख्यतः मिथकीय मानते है। संक्षेप में, यह आदिभाषा स्वभावतः लय और लक्षणा दोनों का प्रयोग करती है।"1 विश्व का प्राचीन काव्य तो मिथक प्रधान ही रहा है, आधुनिक युग में भी अनेक कवियों ने अपने काव्य में मिथक का प्रयोग किया है। अंग्रेजी में मिल्टन, शैले ,कीट्स आदि और हिंदी में प्रसाद, निराला, पंत की कविताओं में मिथकों का प्राचुर्य रहा है। आधुनिक युग में मिथक एक प्रकार की स्वप्न कथा (फैंटेसी)का रूप धारण कर लेते हैं। मुक्तिबोध ने कामायनी का स्वप्नकथा के रूप में इसी आधार पर विवेचन करने का प्रयत्न किया है।

वास्तव में मिथक केवल कपोल कल्पना नहीं है। इसमें इतिहास का तत्त्व भी है और आदि-मानव की गहन अनुभूतियों की अभिव्यक्ति भी। मिथक साहित्य कपोल कल्पना से हटकर प्रतीक रूप में हमें एक संदेश भी देता है। इस साहित्य में मानव की कमजोरियाँ भी अभिव्यक्त होती हैं तो चिंतन की गहराइयाँ भी। मिथक पुरातन अवश्य है, किंतु इसका चिंतन आधुनिक अनुभूतियों से मेल भी खाता है। आश्चर्य होता है कि पुरातन मानव के मन में तत्कालीन परिस्थितियों में कैसे इतने प्रगतिशील और आधुनिक विचारों का प्रवाह स्थान पाया होगा। मिथक साहित्य में प्रतीकात्मक रूप से यह सब है, जो आधुनिक विचारधारा में पाया जाता है।

मिथकीय कल्पना के संबंध में कहा जा सकता है कि मिथक का कथ्य आज कल्पना का विषय बन चुका है तथा सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी में कपोल-कल्पना समझा जाने वाला मिथ मनोविज्ञान और विज्ञान की प्रगति के साथ अपना अर्थ बदलने लगा है। प्रारंभ में तो मिथक अध्येताओं ने मिथक के धार्मिक पक्ष, देवी-देवताओं की कथा को ही महत्व दिया परंतु धीरे-धीरे इसके मनोवैज्ञानिक अभिप्राय और सांस्कृतिक पक्ष को प्रधानता मिलने लगी।

मिथक साहित्य में जो विचार हैं, वे आधुनिक युग के विचारों से कितना मेल खाते हैं, यह देखकर सचमुच आश्चर्य होता है। मिथक साहित्य इतिहास तो नहीं है, लेकिन उसमें निहित विचार तत्त्व इतिहास से अधिक गहराई तक जाकर उस युग के चिंतन तत्त्व को प्रकट करना है। इसीलिए मिथक साहित्य केवल कपोल कल्पित गाथा नहीं है, बल्कि यह प्रतीक रूप में इतिहास के तत्त्व को सिद्ध करता है। हमारी लोककथाएँ, शास्त्रीय ग्रंथ, धार्मिक ग्रंथ मिथ साहित्य के भंडार हैं और उनका आधुनिक विचारधारा से अद्भुत साम्य है। पश्चिम का अंधानुकरण भी हमें गर्त में ही डालेगा। इसलिए आधुनिकता की दौड़ में भी मिथक-कथाओं के महत्त्व को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

१ भारतीय मिथक कोश : डॉ.उषा पुरी

२ भारतीय मिथक कोश : डॉ.उषा पुरी

३ मिथक और साहित्य : डॉ.नगेन्द्र

४ डॉ नगेन्द्र - काव्य बिम्ब पृष्ठ -८

५ डॉ विश्वम्भर नाथ उपाध्याय -जलते और उबलते प्रश्न

६ मिथक और साहित्य : डॉ.नगेन्द्र